चरक संहिता

अग्निवेश कृते तन्त्रे चरक प्रतिसंस्कृते ।

- उपदेष्टा – आत्रेय
- तन्त्रकर्ता – अग्निवेश
- प्रतिसंस्कर्ता – चरक
- सम्पूरक – दृढबल

चरक संहिता पर **कुल 41 टीकायें** लिखी गई है। **जिनमें से 17 संस्कृत** टीकायें हैं।

टीका	टीकाकार	काल
1 चरक न्यास	भट्टार हरिश्चन्द्र	6 शताब्दी
2 चरक पंजिका	स्वामि कुमार	7 शताब्दी
3 निरन्तर पद व्याख्या	जेज्जट	9 शताब्दी
4 न्यास	अमितप्रभ	9 शताब्दी
5 चरक वार्तिक	क्षीरस्वामि दत्त	9 शताब्दी
6 परिहार वर्तिका	आषाढ वर्मा	9 शताब्दी
7 वृहत तन्त्र प्रदीप	नरदत्त	10 शताब्दी
8 चरक चन्द्रिका	गयदास (चन्द्रिकाकार)	11 शताब्दी
9 चरक भाष्य	श्री कृष्ण वैद्य	11 शताब्दी
10 आयुर्वेद दीपिका	चक्रपाणी (चरक चतुरानन, सुश्रुत सहस्त्रनयन)	11 शताब्दी
11 चरक तत्व प्रदीपिका	शिवदास सेन	16 शताब्दी
12 चरक प्रकाश कौस्तुभ	नरसिंह कविराज	17 शताब्दी
13 चरकोपस्कार	योगिन्द्रनाथ सेन	19 शताब्दी
14 जल्कल्पतरू	गंगाधर राय	19 शताब्दी
15 चरक प्रदीपिका	ज्योतिष चन्द्र सरस्वति	20 शताब्दी

चरक संहिता का अंग्रेजी में अनुवाद अविनाश चन्द्र ने 1891 में किया है।

चरक संहिता पर प्रथम अंग्रेजी संस्करण प्राणजीवन मेहता ने जामनगर से 1949 में प्रकाशित किया ।

चरक संहिता का सैद्धान्तिक पक्ष योग व सांख्य दर्शन से तथा व्यवहारिक पक्ष न्याय व वैशेषिक दर्शन से सामन्जस्य रखता है।

चरक संहिता की विषय वस्तु 4 सूत्रों में रखी है।

1 गुरू सूत्र 2 शिष्य सूत्र 3 प्रतिसंस्कृत सूत्र 4 एकीय सूत्र

चरक संहिता में कुल 3 आत्रेय हुए है।

1 पुनर्वसु आत्रेय – चरक संहिता के उपदेष्टा । इन्हे चन्द्रभागी कहा जाता है।

2 कृष्णात्रेय – च.सू. 11 में इनका वर्णन आया है इन्होने अष्टत्रिक का वर्णन किया है।

3 भिक्षु आत्रेय – च. सू. 25 में इनका वर्णन आया है ये कालवाद के समर्थक है।

चरक संहिता को द्वादश सहस्त्री संहिता कहते है। इसमें उपलब्ध सूत्रों की संख्या 9295 है। चरक संहिता में कुल योगों की संख्या 1949 है।

चरक संहिता में 8 स्थान तथा कुल 120 अध्याय है।

1 सूत्रस्थान – 30

2 निदानस्थान – 8

3 विमानस्थान – 8

4 शारीरस्थान – 8

5 इन्द्रिय स्थान – 12

6 चिकित्सा स्थान – 30

7 कल्प स्थान – 12

8 सिद्धि स्थान – 12

➢ आचार्य दृढबल को चरक संहिता का सम्पूरक कहा जाता है उन्होने चरक संहिता के 41 अध्याय लिखे है। कल्प व सिद्धि स्थान के 12 – 12 व चिकित्सा स्थान के 17 अध्याय दृढबल ने लिखे है।

➢ आचार्य चरक ने चिकित्सा स्थान के 13 अध्याय लिखे है।रसायन, वाजिकरण, ज्वर , रक्तपित्त, प्रमेह, कुष्ठ, गुल्म ,राजयक्ष्मा , अर्श ,अतिसार , विसर्प, मदात्यय, द्विवर्णी ।

➢ चरक विशुद्ध का पुत्र , वैशम्पायन का शिष्य व कनिष्क का राजवैद्य था । चरक पंचनद प्रान्त में इरावती व चन्द्रभागा नदियों के बीच स्थित कपिस्थल ग्राम का रहने वाला था ।

➢ दृढबल कपिलबली का पुत्र था तथा इसका काल 4 थी शताब्दी था ।

चरक सूत्रस्थान

चरक संहिता के सूत्रस्थान को अग्निवेश तंत्र का शुभ सिर तथा श्लोक स्थान कहते है।

चरक संहिता के सूत्रस्थान में 30 अध्याय है। जो **7 चतुष्क** में विभाजित है।

1 भेषज चतुष्क 2 स्वस्थ चतुष्क

3 निर्देश चतुष्क 4 कल्पना चतुष्क

5 रोग चतुष्क 6 योजना चतुष्क

7 अन्नपान चतुष्क

➢ संग्रह द्वय – दशप्राणायतनीय अध्याय, अर्थेदशमहामूलीय अध्याय ।

चरक संहिता में कुल 7 सम्भाषा परिषद का वर्णन है।

1 दीर्घजीवीतीय अध्याय – च.सू.1 – आयुर्वेदावतरण से सम्बन्धित 53 आचार्यों ने भाग लिया ।

2 वातकलाकलीय अध्याय – च.सू.12 – वात ,पित्त, कफ के गुण कर्मो से सम्बन्धित – 8 आचार्य ।

3 यजःपुरूषीय अध्याय – च.सू. 25 – पुरूष तथा रोग उत्पत्ति से सम्बन्धित – 11 आचार्य ।

4 आत्रेयभद्रकाप्यीय अध्याय – च.सू. 26 – रसों की संख्या से सम्बन्धित – 10 आचार्य।

5 खुड्डिकागर्भावक्रान्ति शारीर – च.शा. 3 – गर्भ की उत्पत्ति से सम्बन्धित ।

6 शरीरविचयशारीर –च.शा. 6 – गर्भ में सर्वप्रथम अंगोत्पत्ति से सम्बन्धित ।

7 फलमात्रासिद्धि अध्याय – च.सि. – दृढबल द्वारा आयोजित – बस्ति के गुणों से सम्बन्धित ।

1 दीर्घन्जीवितीयमध्याय

अथातो दीर्घन्जीवितीयंमध्यायं व्याख्यास्यामः। नामक सूत्र में 8 पद हैं।

अथ , इति, दीर्घ ,जीवित,अध्याय ,वि, आख्या , स्याम् ।

भगवान इन्द्र के पर्याय – अमरेश्वर ,सहस्त्राक्ष , शचिपति ,सुरेश्वर शक्र ,बलहन्तार ।

AGNIVESH

भारद्वाज के पर्याय – उग्रतपा , महामति ।
आयुर्वेद का अवतरण – ब्रम्हा – दक्षप्रजापति – अश्विनीकुमार – इन्द्र – भारद्वाज – आत्रेय ।
प्रथम सम्भाषा – आयुर्वेद के अवतरण से सम्बन्धित – 53 ऋषियों ने भाग लिया ।
स्थान – पार्श्वे हिमवते शुभे ।

धर्मार्थकाममोक्षाणांमारोग्यं मूलंमुत्तमम् । रोगस्यस्यापहर्तारः श्रेयसो जीवितस्य च ।। च.सू. 1/15

धर्म, अर्थ ,काम व मोक्ष का प्रधान कारण आरोग्य है तथा रोग श्रेयस (अलौकिक सुख) व जीवित (लौकिक सुख) को हरने वाले है।

हेतु लिङ्गौषधज्ञानं स्वस्थातुरपरायणम् । त्रिसूत्रं शाश्वतं पुण्यं बुबुधे यं पितामहः । च.सू. 1 /24

त्रिसूत्र – हेतु ,लिंग , औषध । बुबुधे यं पितामह – ब्रम्हा को स्वयं प्रकाशन ।
महर्षयस्ते ददर्शयथावज्ज्ञांन चक्षुषा । सामान्यं च विशेषं च गुणान् द्रव्याणि कर्म च समवायं च ।
महर्षियों को अपनी ज्ञान चक्षु से षट्पदार्थ का ज्ञान हुआ ।
चरक के अनुसार षट्पदार्थ का क्रम – सामान्य, विशेष,गुण ,द्रव्य ,कर्म ,समवाय ।
वैशेषिक दर्शन के अनुसार षट्पदार्थ का क्रम – द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष समवाय ।
आत्रेय पुनर्वसु के 6 शिष्य थे – अग्निवेश , भेल, जतुकर्ण, पाराशर, हारित ,क्षारपाणि ।
अग्निवेश ने तंत्र की सर्वप्रथम रचना बुद्धि विशेष के कारण की ।
पुनर्वसु आत्रेय ने अपने शिष्यों में 8 ज्ञान देवताओं का प्रवेश कराया । बुद्धि, सिद्धि, स्मृति, मेधा,धृति ,कीर्ति ,क्षमा ,दया ।
आयुर्वेद शब्द की निरूक्ति –

हिताहितं सुखं दुखमायुस्तस्य हिताहितम् । मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते । च.सू.1/41

आयु के लक्षण –

शरीरेन्द्रियसत्वात्मसंयोगो धारि जीवितम् ।नित्यगश्चानुन्धश्च पर्यायैरायुरूच्यते।। च.सू.1/42

आयु के पर्याय – धारि, जीवित ,नित्यग अनुबन्ध । आयु का पर्याय चेतनानुवृति च.सू. 30 में बताया है।
आयुर्वेद को आयु का पुण्यतम वेद माना है।

सर्वदा सर्वभावानां सामान्यं वृद्धि कारणं । ह्रास हेतु र्विशेषश्च प्रवतिरूभयस्य तु ।। च.सू 1/44

आचार्य चक्रपाणी ने सामान्य व विशेष के तीन – तीन भेद किये हैं।

सामान्य	विशेष
1 द्रव्य–सर्वदा सर्वभावानां सामान्यं वृद्धि कारणं ।	1 द्रव्य– ह्रास हेतु र्विशेषश्च ।
2 गुण– सामान्यं ऐकत्वकरं ।	2 गुण– विशेषस्तु पृथकत्वकृत् ।
3 कर्म– तुल्यार्थता हि सामान्यं ।	3 कर्म– विशेषस्तु विपर्ययः ।

न्याय दर्शन ने सामान्य व विशेष के 2 – 2 भेद पर व अपर बताये हैं ।
सत्वमात्मा शरीरं च त्रयमेतत् त्रिदण्डवत् । सत्व ,आत्मा व शरीर को त्रिदण्ड या त्रिस्तम्भ कहा गया है।
स पुमांश्चेतनं तच्चाधिकरणं स्मृतम् । आयुर्वेद का अधिकरण पुरूष या पुमान् को माना गया है। पुरूष ही चेतन है।

द्रव्य /कारण द्रव्य की संख्या – 9

खादी (आकाश ,वायु,अग्नि,जल,पृथ्वी), ,आत्मा ,मन, काल दिशा ।
द्रव्य के प्रकार – 2 कारण द्रव्य व कार्य द्रव्य ।

द्रव्य के भेद – 3 दोषप्रशमन ,धातुप्रदुषण ,स्वस्थवृत । तथा जांगम ,औद्भिद ,पार्थिव ।

गुण – चरक ने गुणों की संख्या 41 बताई है।

न्याय – 24 । वैशेषिक – 17 । मिमांसा – 21 । वाग्भट – 27 । योगिन्द्रनाथ सेन – 42 ।

सार्था गुर्वादयो बुद्धि प्रयत्नान्ताः परादयः ।

- ➢ सार्था /इन्द्रिय गुण – 5 शब्द ,स्पर्श रूप,रस गंध ।
- ➢ परादि गुण – 10
- ➢ गुर्वादि गुण – 20
- ➢ आध्यात्मिक गुण – 6 बुद्धि, सुख, दुख ,इच्छा ,द्वेष , प्रयत्न ।
- ❖ योगिन्द्रनाथ सेन ने मन को अतिरिक्त माना तथा गुणों की संख्या 42 बताई है।
- ❖ गुर्वादि गुणों को शारिरिक गुणों की संज्ञा गंगाधर राय ने दी है।

कर्म – प्रयत्नादि कर्म चेष्टितम् उच्यते ।

वैशेषिक दर्शन ने कर्म के 5 प्रकार बताये है। उत्क्षेपण , अवक्षेपण, प्रसारण, आकुचन ,गमन ।

समवायोऽपृथग्भावो भूम्यादिनां गुणैर्मतः । भूमि आदि द्रव्यों का अपने गुणों के साथ जो अपृथक्कभाव सम्बन्ध है उसे समवाय सम्बन्ध कहते हैं।

द्रव्य – यत्राश्रिता कर्म गुणाः कारणं समवायी यत् तद् द्रव्यं । च.सू. 1/51

क्रियागुणवत् समवायीकारणं द्रव्यम् । सु सू. 40

रसादिनां पंचानां भूतानां यदाश्रयभूतं तद् द्रव्यम् । भावप्रकाश ।

गुण – समवायी तु निश्चेष्टः कारणं गुणः । च.सू 1/51

कर्म संयोगे च विभागे च कारण द्रव्यमाश्रितम् ।कर्तव्यस्य क्रिया कर्म कर्म नान्यदपेक्षते । च.सू. 1 /52

कर्तव्य की क्रिया को कर्म कहते हैं संयोग व विभाग के लिए कर्म किसी अन्य साधन की अपेक्षा नहीं रखता।

इस आयुर्वेद रूपी तन्त्र का प्रयोजन धातु साम्य किया है।

आयुर्वेद के प्रयोजन का वर्णन चरक ने च.सू. 30 में किया है।

रोगों के त्रिविध हेतु – काल ,बुद्धि व इन्द्रियों का मिथ्या ,अयोग व अतियोग होना ।

व्याधि के आश्रय चरक ने 2 बताये बताये हैं शरीर व मन जबकि वेदना के आश्रय 3 होते हैं शरीर, मन व इन्द्रियां ।

दोष भेद – वायु पितं कफश्चोक्तः शरीरो दोष संग्रहः । चरक

वातपित्त श्लेष्माणं देह सम्भव हेतवः । सुश्रुत

वायु पितं कफश्चेति त्रयो दोषाः समासतः । वाग्भट

शारिरिक दोषों की चिकित्सा – देवव्यापाश्रय ,युक्तिव्यापाश्रय ।

मानसिक रोगों की चिकित्सा – ज्ञान ,विज्ञान, धैर्य ,स्मृति ,समाधि ।

काश्यप के अनसार मानसिक रोगों की चिकित्सा – ज्ञान, विज्ञान , धी वीर्य ,स्मृति ।

वाग्भट के अनुसार मानसिक रोगों की चिकित्सा – धीधैर्यात्मादिविज्ञाानं मनौदोषौषधम् परम् ।

दोषों के गुण –

वात	**पित्त**	**कफ**
चरक – 7	**चरक – 7**	**चरक – 7**
रूक्ष शीतो लघु	सस्नेहंमुष्णंतीक्ष्णच द्रव्यं अम्लं	गुरूशीतमृदु स्निग्धं मधुर

सुक्ष्मश्चलोऽथविशदःखरः	सरं कटु	स्थिर पिच्छिलाः ।
वाग्भट – 6	**वाग्भट – 7**	**वाग्भट – 7**
तत्र रूक्षो लघु शीतः खरः सुक्ष्मश्चलोऽनिलः ।	पित्तं सस्नेह तीक्ष्णोष्णं लघु विस्त्रं सरं द्रवम्	स्निग्ध शीतो गुरू मन्दः श्लक्ष्णो मृत्स्नः स्थिरः कफः ।

- वाग्भट ने वात का विशद गुण नहीं माना है। लघु गुण चरक के अनुसार केवल वात का होता हैं जबकि वाग्भट के अनुसार वात व पित्त दोनों का होता है।
- वात व कफ के शीत गुण समान होतें है।
- चरक ने वातकलाकलीय अध्याय में वात के 6 गुण बताये है। सुक्ष्म चल के स्थान पर दारूण गुण बताया।
- चरक ने पित्त के गुणों में अम्ल ,कटु अतिरिक्त माना जबकि वाग्भट ने लघु ,विस्त्र गुण अतिरिक्त माना है।
- वाग्भट ने कफ के मधुर गुण के स्थान पर मंद बताया हैं। वाग्भट ने दोषों के गुणों में रसों को शामिल नहीं किया है।

दोष	प्रकोपक रस	शामक रस
1 वात	कटु ,तिक्त ,कषाय	लवण ,अम्ल ,मधुर
2 पित्त	कटु,अम्ल लवण	तिक्त ,मधुर ,कषाय
3 कफ	मधुर,अम्ल ,लवण	कटु ,तिक्त ,कषाय ।

रसों की उत्पत्ति में प्रधान कारण जल व पृथ्वी हैं जबकि अप्रधान कारण आकाश ,वायु व अग्नि होतें है। रस की योनि जल है।

रस	महाभूत	दोष प्रकोप
1 मधुर	पृथ्वी,जल	कफ
2 अम्ल	पृथ्वी,अग्नि	पित्त,कफ
3 लवण	जल,अग्नि	पित्त ,कफ
4 कटु	वायु,अग्नि	पित्त ,वात
5 तिक्त	वायु ,आकाश	वात
6 कषाय	वायु ,पृथ्वी	वात

आत्मा – निर्विकार परसत्वात्मा सत्वभूतगुणेन्द्रियः। चैतन्यकारणं नित्यो दृष्टा पश्यति हि क्रियाः । च.शा. 1/56

निर्विकार परसत्वात्मा सर्वभूतानां निर्विशेषः । च.शा. 4/33

साध्य रोगों का चिकित्सा सूत्र –

विपरीतगुणैर्देशमात्राकालोपपादितैः । भेषजैर्विनिवर्तन्ते विकाराः साध्यसम्मताः । देश ,मात्रा व काल के विपरीत गुण वाली औषध के सेवन से साध्य रोग ठीक हो जाते है।

असाध्य रोगों की चिकित्सा – साधनं न त्वसाध्यानां व्याधिनामुपदिश्यते । असाध्य व्याधियों की चिकित्सा का कोई साधन नहीं है।

द्रव्य के भेद – 3 दोषप्रशमन ,धातुप्रदुषण ,स्वस्थवृत । तथा जांगम ,औद्भिद ,पार्थिव ।

1 जांगम द्रव्य – 19 – **मधु ,गोरस** , पित्त , वसा ,मज्जा , रक्त ,मांस, मल, मूत्र, चर्म ,वायु ,अस्थि ,स्नायु ,श्रृंग ,नख ,खुर, केश, रोम ,**रोचन** ।

2 पार्थिव द्रव्य – 15 – स्वर्ण ,मण्डूर (मल), पंच लौह ,सिकता ,सुधा ,मनःशिला , आल (हरताल), मणि ,लवण ,गैरिक ,अंजन ।

3 औद्भिद द्रव्य– 18 – मूल,त्वक्, सार ,निर्यास, नाल, स्वरस ,पल्लव **,क्षार, क्षीर,** फल, पुष्प ,**भस्म,** तैल ,कण्टक, पत्र ,शुण्गं कन्द ,प्ररोह ।

मूलीनी द्रव्य – 16

1 वमन – 3	शणपुष्पी,बिम्बी ,वचा ।
2 नस्य – 2	श्वेता ,ज्योतिषमति
3 विरेचन – 11	श्यामा,त्रिवृत ,सप्तला,दंती,द्रवन्ती ,हस्तिदंती ,अजगंधा ,गवाक्षी,अधोगुडा ,क्षीरीणी,वषाणिका

फलीनी द्रव्य – 19

1 वमन – 8	षट्वामक ,त्रपुष हस्तिपर्णी ।
2 नस्य – 1	अपामार्ग
3 विरेचन –10	शंखीनी, आरग्वध ,कम्पीलक ,मुलैठी–2,करन्ज –2 ,हरीतकी ,अन्तःकोटरपुष्पी ,वायविडंग

शोधन वृक्ष – 6 (क्षीरी वृक्ष – 3, त्रिवल्कल – 3)

क्षीरी वृक्ष – अर्क (वमन व विरेचन दोनों),स्नूही (विरेचन),अश्मन्तक (वमन) । चरक के अनुसार इन्हे ही क्षीर त्रय कहते है। जबकि रस तरंगिणी के अनुसार क्षीरत्रय अर्क, वट, स्नूही शामिल हैं।

त्रिवल्कल – कंटकी करन्ज (विरेचन),तिल्वक (विरेचन), शोभान्जन (विसर्प,शोथ,अर्श दद्रु आदि में प्रयुक्त)।

चतुर्विध स्नेह – घृत ,तैल ,वसा ,मज्जा।

स्नेहना जीवना बल्या वर्णोपचयवर्धनाः । स्नेहा ह्येते च विहिता वातपित्तकफापहाः ।

पंचलवण– सैंधव ,सौवर्चल ,विड ,औद्भिद ,सामुद्र ।

अष्टविध मूत्र – मूत्र का सामान्य रस चरक ने कटु तथा अनुरस लवण बताया है।

दीपनीय विषघ्न च कृमिघ्नं च उपदिश्यते । पाण्डु रोगोपसृष्टानामुत्तमं शर्म चोच्यते ।।

चरक के अनुसार मूत्र वातानुलोमक ,पित्तरेचक कफशामक होता है।

वाग्भट के अनुसार मूत्र पित्तवर्धक, सुश्रुत के अनुसार त्रिदोषघ्न तथा काश्यप के अनुसार रसायन होता हैं ।

मूत्र	रस	गुण
1 गाय	मधुर	दोषघ्न ,कृमिकुष्ठनुत ,उदररोगे हितम् ।
2 भैंस	क्षार	अर्श शोफउदरघ्नं ।
3 बकरी	कषाय,मधुर	पथ्यंदोषान्निहन्ति ,त्रिदोषघ्नं ।
4 आवि	तिक्त	स्निग्धं पित्तावरोधी च।
5 उष्ट्र	तिक्त	श्वासकास अर्शोघ्नं ।
6 हस्ति	लवण	हितं तु कृमि कुष्ठिनाम् बद्धविण्मूत्रविषकफविकार अर्शनाशक ।
7 वाजि	तिक्त ,कटु	कुष्ठव्रण विषापहम् ।
8 खर	–	उन्माद अपस्मार ग्रहबाधानाशक ।

AGNIVESH

अष्टविध क्षीर – उष्ट्री,आवी ,अजा,गोक्षीर,माहीष ,हस्तिनी ,वड्वा(घोडी), स्त्री ।

क्षीर के सामान्य गुण– प्रायशो मधुरं स्निग्धं शीत स्तन्य पयो मतम्। प्रीणनं बृंहणं वृष्यं मेध्यं बल्यं मनस्करम् । पण्डु रोगे ऽम्लपित्ते च शोषे गुल्में तथोदरे ।।

तत्वविद् चिकित्सक – योगवित्वप्यरूपज्ञस्तासां तत्वविदुच्यते ।

औषधियों के रूप आदि का ज्ञान ना रखने वाला व्यक्ति भी यदि उनके प्रयोग का ज्ञान रखता हो तो उसे तत्वविद् चिकित्सक कहते है।

उत्तम चिकित्सक – योगमासां तु यो विद्यादेशकालोपपादितम्। पुरूषं पुरूषं वीक्ष्य स ज्ञेयो भिषगुत्तम् ।।

जो चिकित्सक प्रत्येक पुरूष की परिक्षा करके देश काल के अनुसार औषध योग को जानता है उसे उत्तम चिकित्सक कहते है।

यथा विषं यथा शस्त्रं यथाग्निरशनिर्यथा। च.सू.1 /125

अज्ञात औषध विष ,शस्त्र ,अग्नि व वज्र के समान हानिकारक है जबकि ज्ञात औषध अमृत के समान लाभदायक होती है।

योगादपि विषं तीक्ष्णंमुत्तमं भेषजं भवेत् । भेषजं चापि दुर्युक्तं तीक्ष्णं सम्पद्यते विषम् । च.सू. 1/127

युक्ति पूर्वक प्रयोग करने से तीक्ष्ण विष भी औषध का कार्य करता है जबकि अयुक्ति पूर्वक करने से भेषज भी विष का कार्य करती है।

वरमाशीविषंविषं क्वथितं ताम्रमेव वा । पीतमत्यग्निसंतप्ता भक्षिता वाऽप्ययोगुडाः ।
नतु श्रुतवतां वेषं विभ्रतां शरणगतात् गृहीतमन्नं पानं वा वित ं वा रोगपीडितात् ।। च.सू. 1/132–133

भयंकर सर्पविष व उबला हुआ तांबा पी लेना अच्छा है अथवा तपाये हुए लौहे के गोले खा लेना अच्छा है किन्तु शास्त्रज्ञ चिकित्सकों का वेश धारण करने वाले कपटी वैद्य को शरण में आये हुए पीडित व्यक्ति से अन्न पीने के पदार्थ व धन लेना उचित नहीं है।

तदैव युक्तं भैषज्य यदारोग्याय कल्पते । स चैव भिषजां श्रेष्ठो रोगेभ्यो यः प्रमोचयेत् । च.सू. 1/135

वही औषध ठीक है जो आरोग्य प्रदान करती है तथा वही चिकित्सक श्रेष्ठ है जो रोगो से मुक्ति प्रदान करता है।

2. अपामार्गतण्डुलीय अध्याय

अन्तः परिमार्जन द्रव्यों का वर्णन है।

शिरोविरेचक द्रव्य – 25 अपामार्ग ,पिप्पली ,मरिच, शुण्ठी , शिरीष ,लवण द्वय(सैंधव व सोवर्चल) , ज्योतिष्मती आदि ।

चरक के अनुसार शिरोविरेचक द्रव्यों में मधुर व अम्ल रस नहीं होता है।

विरेचन द्रव्यों के आश्रय 6 होते है क्षीर ,मूल त्वक् , पत्र पुष्प व फल ।

शिरोविरेचन द्रव्यों के आश्रय 7 होते है। मूल, त्वक्, पत्र, पुष्प फल कन्द व निर्यास ।

वमन द्रव्य 10 – मदनफल ,जीमूतक ,इक्ष्वाकु ,धामार्गव कुटज कृतवेधन ,मधुक ,पिप्पली निम्ब व ऐला ।

विरेचन द्रव्य 17 – त्रिफला ,त्रिवृत , दन्ती, सप्तला ,वचा ,करंज आदि ।

आस्थापन द्रव्य व अनुवासन द्रव्य 29 – दशमूल के द्रव्य , पंचलवण ,चतुर्विध स्नेह एरण्ड ,**मदनफल** आदि

पंचकर्माणि कुर्वीत मात्राकालौ विचारयन् । मात्रा व काल का विचार कर पंचकर्म का प्रयोग करना चाहिए ।

चरक संहिता में सर्वप्रथम पंचकर्म शब्द का वर्णन अपामार्गतण्डुलीय अध्याय में आया है।

युक्तिज्ञ चिकित्सक का वर्णन अपामार्ग तण्डुलीय अध्याय में किया हैं

चिकित्सा की सिद्धि का आधार युक्ति है **मात्राकालाश्रय युक्ति : सिद्धियुक्तौ प्रतिष्ठिता ।**

चरक ने अपामार्ग तण्डुलीय अध्याय में 28 यवागु का वर्णन किया है जिनमें से 6 पेया है।
1 पाचनी गाहिणी पेया 2 वातविकारनाशक पेया 3 मूत्रकृच्छ नाशक पेया 4 पित्तश्लेष्मातिसार नाशक पेया 5 रक्तातिसार नाशक पेया 6 आमातिसार नाशक पेया

अष्टाविंशतिरित्येता यवाग्वः परिकीर्तिताः ।

1.शूलनाशक यवागु – पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ।

2.पाचनीग्राहीणी पेया – दधित्थबिल्वचांगेरीतक्रदाडिमसाधिता।

3.वातविकार नाशक पेया – सवाते पंचमूलिकी ।

4.पित्तश्लेष्मातिसारनाशक पेया – शालपर्णीबलाबिल्वैः पृश्निपर्ण्या च साधिता ।

5.रक्तातिसारनाशक पेया – पयस्यर्धोदके च्छागे ह्रीबेरोत्पलनागरैः ।

6.आमातिसार नाशक पेया –दद्यात् सातिविषां पेया।

7.मूत्रकृच्छनाशक पेया – श्वदंष्ट्राकण्टकारीभ्यां ।

8.क्रिमिनाशक यवागु – विडंगपिप्पलीमूलशिग्रुभिर्मरिचने ।

9.पिपासा नाशक यवागु – मृद्विकासारिवालाजपिप्पलीमधुनागरैः।

10.विष नाशक यवागु – सोमराजीविपाचिता ।

11.बृंहणी यवागु – सिद्धावराहनिर्युहे ।

12.कर्शनीयां यवागु – गवेधुकानां मृष्टानां कर्शनीया समाक्षिका ।

13.स्नेहनी यवागु – सर्पिष्मति बहुतिला स्नेहनी लवणान्विता ।

14.रूक्षणी यवागु – कुशामलकनिर्युहे श्यामाकानां ।

15.श्वास कास नाशक यवागु – दशमूलीश्रृता कासहिक्काश्वासकफापहा ।

16.पक्वाशयगत वात नाशक यवागु – यमके मदिरासिद्धा ।

17.रेचनी यवागु – शाकेमार्सेस्तिलैर्माषैः ।

18.सांग्राहिकी यवागु – जम्ब्वाम्रास्थिदधित्थाम्लबिल्वैः ।

19.भेदीनी यवागु – क्षारचित्रकहिंङ्ग्वम्लवेतसैर्भेदिनी ।

20.वातानुलोमनी यवागु – अभयापिप्पलीमूलविश्वैर्वातानुलोमनी।

21.घृतव्यापदनाशिनी यवागु – तक्रसिद्धा यवागुः ।

22.तैलव्यापदनाशिनी यवागु – तक्रपिण्याकसाधिता ।

23.विषमज्वरनाशिनी यवागु – गव्यमांसरसैः साम्ला ।

24.कण्ठरोगनाशिनी यवागु – यवानां यमके पिपल्यामलकः श्रृता ।

25.शुक्रवहस्त्रोतोशूलनाशिनी यवागु – ताम्रचूडरसे सिद्धा ।

26.वृष्या यवागु – समाषविदला वृष्या ।

27.मदरोगनाशिनी यवागु – उपोदिकादधिभ्यां तु सिद्धा ।

28.क्षुधारोगनाशिनी यवागु – अपामार्गक्षीरगोधारसैः श्रृता ।

चिकित्सक की अहर्ताऐं –

स्मृतिमान् हेतु युक्तिज्ञो जितात्मा प्रतिपत्तिमान् । भिषगौषधसंयोगैश्चिकित्सां कर्तुमर्हति ।। च.सू. 2/36

चरक के अनुसार चिकित्सक की 5 अहर्ताऐं हैं स्मृतिमान ,हेतु ,युक्तिज्ञ, जितात्मा ,प्रतिपत्तिमान ।।

3.आरग्वधीय अध्याय

बहिःपरिमार्जन द्रव्यों का वर्णन है। 32 सिद्धतम लेपों का वर्णन है।

15	कुष्ठनाशक	1	उदरशूल नाशक

4	वातविकार नाशक	1	पार्श्वशूल नाशक
3	वातरक्त नाशक	1	शीतनाशक
2	शिरःशूलनाशक	1	विषघ्न
2	दाहनाशक	1	स्वेदहर
		1	दुर्गन्धनाशक

कुष्ठनाशक लेप में भावना द्रव्य गोपित्त व सर्षप तैल होता है।

कुष्ठनाशक लेप –

मनःशिलाले मरिचानि तैलमार्क पयः कुष्ठहरः प्रदेहः ।

तुत्थविडंगमरिचानि कुष्ठं लौध्रं च तद्वतसमनःशिलं स्यात् ।

रसान्जनं सप्रपुनाडबीजं युक्तं कपिथस्य रसेन लेपः ।

करन्जबीजैडगजं सकुष्ठं गोमूत्रपिष्टं च परं प्रदेह ।

वातव्याधिनाशक लेप – आनूपमत्स्य**ामिषवेसवारैरूष्णैः प्रदेह** पवनापहः स्यात् ।

स्नेहश्चतुर्भिर्दशमूलमिश्रैर्गधोषधेश्चानिलहः।

उदरशूलनाशक लेप – तक्रेणयुक्तं यवचूर्णमुष्णं सक्षारमर्ति जठरे निहन्यात् ।

वातरक्तनाशक लेप – गोधूमचूर्ण छगलीपयश्च ।

शिरःशूलनाशक लेप – नतोत्पलं चन्दनकुष्ठयुक्तं शिरोरूजाया सघृतं प्रदेहः।

विषनाशक लेप – विषं शिरीषस्तु ससिन्धुवारः ।

स्वेदहर लेप – शिरीषलामज्जकहेमलौध्रेस्त्वग्दोषहरः प्रघर्षः ।

शरीरदुर्गन्धनाशक लेप – पत्राम्बु लोध्राभयचन्दनानि शरीरदौर्गन्ध्यहरः प्रदेहः ।।

4 षड्विरेचनशताश्रितीय अध्याय

विरेचन द्रव्य – 600 । कषाय – 500 । महाकषाय – 50 । कषाय कल्पना – 5 । कषाय योनि – 5 ।

विरेचन द्रव्यों के आश्रय – क्षीरमूल त्वक् पत्र फलानीति ।।

पंचकषाय योनि – मधुर ,अम्ल ,कटु तिक्त ,कषाय । कषाय की लवण योनि नहीं होती है।

पंचविध कषाय कल्पना – स्वरसः कल्कः श्रृतः शीतः फाण्टः कषाय इति । **तेषां यथा पूर्व बलाधिक्यम्** । अतः कषाय कल्पना व्याध्यातुरबलापेक्षिणी ।

वाग्भट ने भी कषाय कल्पना की संख्या 5 बताई हैं

पंचधैव कषायाणां पूर्वं पूर्वं बलाधिका ।। वाग्भट

सुश्रुत ने कषाय कल्पना 6 बताई है। क्षीर स्वरस कल्क श्रृत शीत फाण्ट । **यथोतरं लाघवं प्रदीष्टा ।सुश्रुत**

काश्यप ने कषाय कल्पना की संख्या 7 बताई है स्वरस ,कल्क ,कषाय ,शीत ,फाण्ट ,चूर्ण , अभिसव ।।

पंचाशन्महाकषाया महतां च कषायाणां **लक्षणोदाहरणार्थं** व्याख्यता भवन्ति ।।

चरक के अनुसार प्रथम महाकषाय जीवनीय तथा अन्तिम महाकषाय वयस्थापन महाकषाय है।

चरक ने पाचनीय महाकषाय का वर्णन नहीं किया है।

चरक के अनुसार घ्न जैसे तृप्तिघ्न आदि महाकषायों की संख्या 6 है । जनन व शोधन महाकषायों की संख्या 4 ,पग जैसे स्नेहोपग महाकषाय की संख्या 7 है ,निग्रह महाकषाय की संख्या 3 है , हर महाकषाय की संख्या 5 ,शमन महाकषाय की संख्या 5 ,तथा स्थापन महाकषाय की संख्या 5 है।

AGNIVESH

1 **जीवनीय महाकषाय –** जीवक ,ऋषभक ,मेदा ,महामेदा , काकोली ,क्षीरकाकोली मुद्गपर्णी ,माषपर्णी ,जीवन्ती व मधुक ।

भावप्रकाश का जीवनीय गण – चरक का जीवनीय महाकषाय व ऋद्धि , वृद्धि । कुल 12 द्रव्य ।

अष्टवर्ग – जीवक ,ऋषभक , मेदा , महामेदा , काकोली ,क्षीरकाकोली , ऋद्धि वृद्धि ।

1 **बृंहणीय** – अश्वगंधा , काकोली ,क्षीरकाकोली , भारद्वाजी (वनकार्पास) आदि ।
2 **लेखनीय** – मुष्तक कुष्ठ हरिद्रा वचा अतिविषा , **कटुरोहिणी ।**
3 **भेदनीय – सुवहा (त्रिवृत)** , शकुलादिनी ,स्वर्णक्षीरी आदि
4 **सन्धानीय – मधुक ,**मधुपर्णी अम्बष्ठकी ,समन्गा ,मोचरस ।
5 **दीपनीय – षडूषण (**पिप्पली,पिप्पलीमूल , चव्य ,चित्रक ,नागर ,मरीच) **BAAH (**भल्लातकास्थि ,अजमोदा ,अम्लवेतस ,हिंगुनिर्यास)
6 **बल्य –** ऐन्द्री , ऋषभी (केवांच) ,स्थिरा (शालपर्णी) ,रोहीणी (जटामांसी) आदि ।
7 **वर्ण्य –** चन्दन ,उशीर ,मधुक ,मंजिष्ठा ,सारिवा , पयस्या आदि । हरिद्रा का वर्णन वर्ण्य महाकषाय में नहीं किया है।
8 **कठ्य –** सारिवा ,मधुक ,पिप्पली ,वृहती ,कण्टकारिका आदि ।
9 **हृदय –** आम्र ,आम्रातक ,लकुच ,करमर्द ,वृक्षाम्ल ,अम्लवेतस ,कुवल , बदर ,दाडिम , मातुलुंग ।
10 **तृप्तिघ्न –** नागर ,चव्य ,चित्रक ,विडंग आदि ।
11 **अर्शोघ्न –** कुटज ,बिल्व ,चित्रक ,अभया ,दारूहरिद्रा चव्य ,वचा आदि ।
12 **कुष्ठघ्न –** खदिर ,अरूष्कर ,सप्तपर्ण , आरग्वध ,अभया ,आमलकी ,हरिद्रा आदि ।
13 **कण्डूघ्न –** कृतमाल(आरग्वध), सर्षप आदि ।
14 **कृमिघ्न –** अक्षीव ,मरिच ,विडंग ,निर्गुण्डी ,आखुपर्णिका ।
15 **विषघ्न –** हरिद्रा ,मंजिष्ठा , सुवहा , शिरीष ,सिन्धुवार ,श्लेष्मातक ,सुक्ष्मैला , पालिन्दी ,चन्दन, कतक।
16 **स्तन्यजनन –** तृणपंचमूल के घटक शर को छोडकर ।
17 **स्तन्यशोधन –** इस गोरी सारिवा को M.D. M.S पति चाहिए । इन्द्रयव ,गुडुची ,सारिवा ,कुटकी ,मुस्तक ,देवादारू,मुर्वा ,शुण्ठी ,पाठा चिरायता ।
18 **शुक्रजनन –** जीवनीय महाकषाय के 7 द्रव्य (महामेदा ,जीवन्ति व मधुक को छोडकर) तथा जटिला ,कुलिंगा व शतावरी ।
19 **शुक्रशोधन –** समुद्रफेन आदि ।
20 **स्नेहोपग –** मृद्विका ,मधुक ,काकोली ,क्षीरकाकोली , जीवक ,जीवन्ति शालपर्णी आदि ।
21 **स्वेदोपग –** शोभान्जन आदि ।
22 **वमनोपग –** मधु ,मधुक कोविदार ,कर्बुदार आदि (कांचनार के भेदों का वर्णन)
23 **विरेचनोपग –** द्राक्षा ,काश्मर्य परूषक ,अभया ,आमलकी ,विभितक ,कुवल ,बदर ,कर्कन्धु ,पीलु (बेर की जातियों का वर्णन) ।
24 **आस्थापनोपग**
25 **अनुवासनोपग –** रास्ना ,मदनफल ,श्योनाक अग्निमंथ ,बिल्व गोक्षूर आदि ।
26 **शिरोविरेचनोपग –**
27 **छर्दिनिग्रहण –** मृल्लज (मृतिका)।
28 **तृष्णानिग्रहण –** गुडुची आदि ।
29 **हिक्कानिग्रहण –**

AGNIVESH

30 **पुरीषसंग्रहणीय** – मोचरस ,समंगा आदि ।
31 **पुरीषविरेचनीय** – शल्लकी ,शाल्मली ,श्रीवेष्टक ,भृष्टमृतिका आदि ।
32 **मूत्रसंग्रहणीय** – भल्लातक आदि ।
33 **मूत्रविरंजनीय** – कमल के भेदों का वर्णन है।
34 **मूत्रविरेचनीय** – गोक्षूर ,पुनर्नवा ,पाषाणभेद, दभ, कुश ,काश ,गुन्द्रा ,इत्कटमूल आदि ।
35 **कासहर** – द्राक्षा ,तामलकी आदि ।
36 **श्वासहर** – शटी (कचूर), तामलकी आदि ।
37 **शोथहर – दशमूल के द्रव्य ।**
38 **ज्वरहर** – सारिवा ,शर्करा ,पाठा ,मंजिष्ठा द्राक्षा ,पीलू ,परूषक ,हरितकी ,विभितकी ,आमलकी ।
39 **श्रमहर** – द्राक्षा ,खजूर ,यव आदि ।
40 **दाहप्रशमन** –लाजा ,चन्दन ,गम्भारी ,मधूक ,शर्करा आदि ।
41 **शीतप्रशमन** – तगर ,अगुरू , धान्यक , श्रृंगवेर , आदि ।
42 **उदर्दप्रशमन** – खदिर ,कदर ,इरिमेद (खदिर की जातियों का वर्णन), अर्जुन ।
43 **अंगमर्दप्रशमन** – शालपर्णी ,पृश्नीपर्णी , वृहती ,कण्टकारी आदि ।
44 **शूलप्रशमन – षडूषण GAAA(**गण्डीर ,अजमोदा ,अजगंधा ,अजाजी)
45 **शोणितस्थापन** –मधु ,मधुक ,मोचरस ,रूधिर (कुंकुंम),गैरिक ,प्रियंगु ,शर्करा ,लाजा आदि ।
46 **वेदनास्थापन** –मोचरस , अशोक आदि। **चरक के अनुसार अशोक का वर्णन वेदनास्थापन महाकषाय में है**
47 **संज्ञास्थापन** – हिंगु ,अशोकरोहिणी आदि ।
48 **प्रजास्थापन** – ऐन्द्री ,ब्राम्ही ,शतवीर्या ,सहस्त्रवीर्या ,अव्यथा (हरितकी),शिवा (हरिद्रा),अरिष्टा (कुटकी) आदि ।
49 **वय प्रजास्थापन** – अभया ,अमृता ,धात्री ,मण्डूकपर्णी आदि ।
50 **महाकषाय – नहि विस्तरस्य प्रमाणमस्ति,च चाप्यतिसङंक्षेपोऽल्पबुद्धिनां सामर्थ्यायोकल्पते ,तस्मादनति संङक्षेपेणानतिविस्तरेण चोपदिष्टाः।। च.सू. 4**

एकोऽपि ह्यनेकां संज्ञा लभते " एक ही द्रव्य पृथक पृथक कार्य करता हुआ अलग अलग महाकषायों मे मिलता है।

चरक ने महाकषाय का वर्णन मंद बुद्धि व बुद्धिमान व्यक्ति दोनों के लिए किया है। **मंदानां व्यवहाराय बुद्धानां बुद्धिवृद्धये ।।**

तेषां कर्मसु बाह्येषु योगमाभ्यन्तरेषु च । संयोगं च प्रयोगं च यो वेद स भिषग्वरः ।च.सू. 4 /29

5 मात्राशितीय अध्याय

मात्राशी स्यात्। आहारमात्रापुनरग्निबलापेक्षिणी।। च.सू. 5/3

चरक के अनुसार आहार की मात्रा केवल अग्नि बल की अपेक्षा करती है **जबकि वाग्भट् के अनुसार** आहार की मात्रा अग्नि बल व आहार की गुरूता लघुता की अपेक्षा करती है।

1 लघु द्रव्य – वात और अग्नि – अग्नि दीपक।
2 गुरू द्रव्य – पृथ्वी और जल – दोष कारक।

चरक के अनुसार गुरू द्रव्यों का प्रयोग दोष कारक होने के कारण अधिक मात्रा में नहीं करना चाहिए। गुरू द्रव्यों का प्रयोग तीन भाग की तृप्ति अथवा दो भाग की तृप्ति अनुसार करना चाहिए। तथा लघु द्रव्यों का प्रयोग भी अधिक मात्रा में नहीं करना चाहिए।

नित्य के सेवन के अयोग्य – वल्लूर (शुष्क मांस), शुष्क शाक, शालूक (कमल की जड), बिस, तथा दुर्बल व्यक्ति को मांस, कुर्चिका (मठ्ठा), किलाट(फटा दूध) , शोकर (सूअर का मांस) , गौ मांस, माहिष मांस, मत्स्य, दधि मांष(उडद), **यवक(जई)**, का निरन्तर सेवन निषेध है।

नित्य प्रयुक्त होने वाले द्रव्य – षष्टिक शाली , मुंग, सेंधव, आमलकी, **यव ,** अन्तरिक्ष जल, घृत, जांगल मांस, मधु का प्रयोग नित्य करना चाहिए।

संतुलित आहार –

तच्च नित्यं प्रयुन्जीत स्वास्थ्यं सेवानुवर्तते। अजातानां विकाराणामनुत्पत्तिकरं च यत्।। च.सू. 5/13

स्वस्थवृत – चरक ने स्वस्थवृत का वर्णन मात्राशतीय अध्याय में किया है, जबकी सद्वृत का वर्णन इन्द्रियोपक्रमणीय अध्याय (च.सू. 8) में किया है।

अंजन – चरक के अनुसार नित्य प्रयुक्त अंजन –सौवीरंजन। रसांजन का प्रयोग चरक के अनुसार पांचवी का आंठवी रात्री में करते हैं। सुश्रुत के अनुसार नित्य प्रयुक्त अंजन – स्त्रौतोऽन्जन।

र.र.स. के अनुसार अंजन के पांच प्रकार हैं। 1 सौवीरंजन (sb_2S_3) 2 स्त्रौतोऽन्जन (sb_2S_3) 3 रसांजन (Hgo) 4 पुष्पांजन (Zno) 5 नीलांजन (Pbs)

रस जल निधि ने अंजन के छः प्रकार बताये हैं। कुलत्थाऽन्जन को अतिरिक्त माना है।

अंजन विशेष रूप से कफ नाशक होता है। **ततः श्लेष्महरं कर्म हितं दृष्टेः प्रसादनम्।।**

तीक्ष्णअंजन का प्रयोग दिन में निषेध है।स्त्रावण अंजन को प्रयोग सदैव रात्री में करना चाहिए।

ऋतु अनुसार अंजन प्रयोग काल – (शारंधर)

हेमन्त, शिशिर–मध्यान्न। ग्रीष्म, शरद – पूर्वान्ह, अपरान्ह। बसन्त में सदैव। वर्षा– बादल व उष्णता नही होने पर।

धूमपान – धूमवर्ति निर्माण में घटक द्रव्यों की संख्या –34

धूमवर्ति की लम्बाई – 8 अंगुल। मोटाई – अंगुष्ठ प्रमाण। आकृति– यवसन्निभाम्।

चरक के अनुसार धूमवर्ति की लम्बाई – 8 अंगुल।वाग्भट् – 12 अंगुल। विदेहनिमि – 6 अंगुल।

धूमवर्ति निर्माण के घटक द्रव्यों में तगर और कुष्ठ का प्रयोग नहीं करते हैं। इनका प्रयोग करने से मस्तुलुंग स्त्राव होने के कारण मृत्यु हो जाती है।

धूमपान का फलश्रुति – न च वातकफात्मानां बलिनोऽप्यूर्ध्वजत्रुजाः।
खालित्यं पिन्जरत्वं च केशानां पतनं तथा।।

सम्यक धुमपान के लक्षण –

हत्कण्ठेन्द्रियसंशुद्धिलंघत्वं शिरसः शमः। यथेरितानां दोषाणां सत्यक् पीतस्य लक्षणम्।।च.सू. 5/37

यदा चोरश्च कण्ठश्च शिरश्च लघुतां व्रजेत्। ।च.सू. 5/52

धूमपान के उपद्रव – 1 बाधिर्य 2 आन्ध्य 3 मूकत्व 4 रक्तपित्त 5 शिरोभ्रम ।

धूमपानजन्य उपद्रव की चिकित्सा – तत्रेष्टं सर्पिषः पानं नावनान्जनतर्पणम्।।

धूमपान के अयोग्य व्यक्ति – विरेचन के बाद ,बस्ति के बाद ,रक्तपित्त ,विष से पिडित ,शोक से पीडित ,गर्भिणी ,तालुशोष व तिमिर के रोगी को धूमपान का निषेध है।

AGNIVESH

शिर ,घ्राण व अक्षि रोगों में नासिका से धूम ग्रहण करते हैं जबकि कण्ठ रोगो में मुख से धूम ग्रहण करते है तथा ही अवस्थाओं में मुख से धूम का निर्हरण करें । नासिका से धूम का निर्हरण करने पर दृष्टि का विनाश हो जाता है।

प्रायोगिक धूमपान के काल – चरक ने प्रायोगिक धूमपान के काल 8 बताये है। स्नान ,भोजन ,वमन ,क्षवथु ,दातौन, नस्य ,अंजन ,निद्रा के बाद ।

रोगास्तस्य तु पेयाः स्युरापानास्त्रिस्त्रयस्त्रयः '' चरक ने धूमपान 3 घूंठ 3 बार पीने का निर्देश किया है। चरक के अनुसार एक दिन में प्रायोगिक धूमपान 2 बार ,स्नेहिक 1 बार तथा विरेचनिक धूमपान एक दिन में 3–4 बार करते है।

सुश्रुत ने धूमपान के काल 12 बताये है। प्रायोगिक – 4 ,स्नेहिक – 5 ,विरेचनिक – 3 ।

1 वाग्भट ने धूमपान के काल 24 बताये है। प्रायोगिक – 8 ,स्नेहिक – 11 ,विरेचनिक – 5 ।

धूमनेत्र – चरक के अनुसार धूमनेत्र ऋजु ,त्रिकोष तथा इसका छिद्र कोलास्थि (बेर की गुठली) के समान होना चाहिए । प्रायोगिक धूमनेत्र 36 अंगुल ,स्नेहिक 32 अंगुल ,विरेचनिक 24 अंगुल होना चाहिए

1 सुश्रुत के अनुसार प्रायोगिक ,स्नेहिक व विरेचनिक धूमनेत्र की लम्बाई क्रमशः 48, 32, 24 अंगुल होती है।
2 वाग्भट के अनुसार प्रायोगिक ,स्नेहिक व विरेचनिक धूमनेत्र की लम्बाई क्रमशः 40 , 32, 24 अंगुल होती है।

अपीत धूमपान के लक्षण – अविशुद्ध स्वरो यस्य कण्ठश्च सकफो भवेत । स्तिमितो मस्तकश्चैवमपीतं धूममादिशेत् ।।

अतिपीत धूमपान के लक्षण – तालु मूर्धाश्च कण्ठश्च शुष्यते परितप्यते ।

नस्य – प्रयोग – प्रावट ,शरद व बसन्त ऋतु ।

फलश्रुति – न च केशाः प्रमुच्यन्ते वर्धन्ते च विशेषतः । मन्यास्तम्भः शिरःशूलमर्दितः हनुसंग्रहः । पीनसार्धावभेदौ च शिरः कम्पश्च शम्यति ।

स्हसा उत्पन्न आस्य रोगों में हितकारी ।

अणु तैल निर्माण विधि –

चन्दागुरूणी पत्रं दार्वीत्वक् मधुकं बलाम् ।..... आदि औषध द्रव्यों को 100 गुना माहेन्द्र जल में क्वाथ करते हैं तथा 10 वें पाक में अजा दुग्ध मिलाते है। **प्रयुज्य मात्रा – अर्द्ध पल ।** हर तीसरे दिन प्रयुक्त करते है तथा कुल 7 बार प्रयुक्त करते है। इस प्रकार अणु तैल का कुल सेवन काल 13 दिन होता हैं।

दातौन – आपोथिताग्रं द्वौ कालौ कषायकटुतिक्तकम् ।

दातौन सेवन के काल चरक ने दो बताये हैं तथा दातौन का रस कटु ,तिक्त ,कषाय माना है।

चरक के अनुसार दातौन के लिए प्रयुक्त वृक्ष करन्ज ,करवीर ,अर्क ,मालती ,अर्जुन व असन है।

1 सुश्रुत ने रस के अनुसार दातौन का वर्णन किया है तथा मधुर रस में मधूक (महुआ) ,कटु में करंज ,तिक्त में निम्ब ,कषाय रस में खदिर को श्रेष्ठ माना है।

दातौन के लाभ – निहन्ति गंध वैरस्य जिव्हादन्तास्यजं मलम् ।

अन्जन शलाका ,जिव्हा निर्लेखनी ,दातौन का सामान्य प्रमाण क्रमशः 8 ,10 ,12 अंगुल होता है ।

जिव्हानिर्लेखनी – सुवर्ण, रजत, ताम्र ,कांस्य व पीतल द्वारा निर्मित ।

सुगन्धित द्रव्य धारण – जातिकटुकपूगाना लवंगस्य फलानि च । कक्कोलस्यं फलं पत्रं ताम्बूलस्य शुभं तथा

तैलगण्डूष – फलस्त्रुति – न च दन्ताः क्षय यान्ति दृढमूला भवन्ति च । न शूल्यन्ते न चाम्लेन हृष्यन्ते भक्षयन्ति च ।।

गण्डूष	कवल
असंचारी	संचारी
द्रव	कल्क
1 कोल	1 कर्ष

कर्णपूरण – न कर्णरोगा वातोत्था न मन्याहनुसंग्रह ।
अभ्यंग – स्पर्शनेऽभ्यधिको वायुः स्पर्शनं च त्वगाश्रितम् । त्वच्यश्च परभ्यंगस्तस्मातं शीलयेन्नरः ।।
पादाभ्यंग – खरत्वं स्तब्धता रौक्ष्यं श्रमः सुप्तिश्चः पादयोः । **दृष्टि प्रसादं लभते** ।
न च स्याद् गृध्रसीवातः पादयो स्फुटनं न च। न सिरास्नायु संकोचः पादाभ्यंगेन पादयोः ।।
शरीरमार्जन – दौर्गन्ध्यं गौरवं तन्द्रां कण्डूमलमरोचकम् । स्वेदवीभत्सतां हन्ति शरीरमार्जनम् ।
स्नान – पवित्रं वृष्यमायुष्यं श्रमस्वेदमलापहम् । शरीरबलसन्धानं **स्नानमोजस्करं परम् ।।**
निर्मल वस्त्र धारण – काम्यं यशस्यमायुष्यं लक्ष्मीघ्नं प्रहर्षणम् । **श्रीमत्पारिषदं** शस्तं निर्मलाम्बरधारणम् ।।
सुगन्धित द्रव्य धारण –वृष्यं सौगन्ध्यंमायुष्यं काम्यं पुष्टि बलप्रदम् । सौमनस्यमलक्ष्मीघ्नं गन्धमाल्यनिषेवणम् ।।
रत्न आभूषण धरण – धन्यं मंगल्यं आयुष्यं श्रीमद्व्यसनसूदनम् । हर्षणं काम्यमोजस्यं रत्नभरणधारणम् ।।
पैरों तथा मलमार्गों की शुद्धि –मेध्यं पवित्रंमायुष्यमलक्ष्मीकलिनाशनम् ।पादयोर्मलमार्गाणां शौचधानमभीक्ष्णशः ।।
क्षौरकर्म – पौष्टिकं वृष्यंमायुष्यं शुचिरूपविराजनम्। केशश्मश्रुनखादिनां **कल्पनं** सम्प्रसाधनम् ।।
पादत्र धारण – चक्षुष्यं स्पर्शनं हितं पादयोर्व्यसनापहम् । **बल्यं पराक्रमसुखं वृष्यं पादत्रधारणम् ।।**
छत्रधारण – ईते प्रशमनं बल्यं गुप्त्यावरणशंकरम् । घर्मानिलरजोऽम्बुघ्नं छत्रधारणमुच्यते ।।
दण्डधारण – स्खलतः सम्प्रतिष्ठानं शत्रूणां च निषूदनं । अवष्टम्भनमायुष्यं भयघ्नं दण्डधारणम् ।।
नगरी नगरस्येव रथस्येव रथी यथा । स्वशरीरस्य मेधावी कृत्येष्ववहितो भवेत् ।। च.सू. 5/103
जिस प्रकार नगर का स्वामी नगर की तथा रथ का स्वामी रथ की रक्ष में सदैव तत्पर रहता है उसी प्रकार बुद्धिमान व्यक्ति को सदैव शरीर की रक्षा करनी चाहिए ।।

6 तस्याशितीय अध्याय

ऋतु चर्या का वर्णन
आहार के प्रकार – चरक / सुश्रुत – 4 अशित,पीत, लीढ़, खादित
शारंधर – 6 लेह, पेय, भक्ष्य, भोज्य, चर्व्य, चोष्य
संवस्तर – आदान काल (उत्तरायण)
विसर्गकाल (दक्षिणायन)
आदानकाल (आग्नेय) शिशिर, बसन्त, ग्रीष्म ऋतु।
विसर्गकाल (सौम्य) – वर्षा, शरद, हेमन्त ऋतु।

आदान काल में क्रमशः वातावरण में रूक्षता की वृद्धि हो जाती है।

ऋतु	**स्वाभाविक रस**	**बल**	**रूक्षता**
शिशिर	तिक्त	↓ कमी	↓ वृद्धि
बसन्त	कषाय		
ग्रीष्म	कटु		

विसर्ग काल में क्रमशः वातावरण में स्निग्धता की वृद्धि होती है।

ऋतु	स्वाभाविक रस	बल	रूक्षता
वर्षा	अम्ल	वृद्धि	वृद्धि
शरद	लवण		
हेमन्त	मधुर		

सामान्य ऋतु विभाग	दोषानुसार ऋतु विभाग
माद्य– फाल्गुन – शिशिर	फाल्गुन चैत्र– बसन्त
चैत्र वैशाख – बसन्त	वैशाख ज्येष्ठ – ग्रीष्म
ज्येष्ठ आषाढ़ – ग्रीष्म	आषाढ़ श्रावण – प्रावट
श्रावण भाद्रपद – वर्षा	भाद्रपद अश्विन – वर्षा
अश्विन कार्तिक – शरद	कार्तिक मार्गशीष – शरद
मार्गशीर्ष पौष – हेमन्त	पौष माध – हेमन्त

शारंग्धर के अनुसार ऋतु विभाग –

मेष– वृषभ	ग्रीष्म
मिथुन – कर्क	प्रावट
सिंह – कन्या	वर्षा
तुला–वृश्चिक	शरद
धनु–मकर	हेमन्त
कुंभ – मीन	बसन्त

ऋतु के अनुसार दोषों का संचय, कोप, शमन

दोष	संचय	कोप	शमन
वात	ग्रीष्म	वर्षा	शरद
पित्त	वर्षा	शरद	हेमन्त
कफ	हेमन्त	बसन्त	ग्रीष्म

ऋतुओं के पर्याय

शरद – धारा धरात्यय/ धनात्यय

बसन्त – कुसुमागम

हेमन्त – तुषार

वर्षा – धर्मात्यय

प्रावट (सु) – तापात्यय

ऋतुचर्या –

1हेमन्त ऋतु –शीते शीतानिलस्पर्शसंरूद्धो बलिनां बली।पक्ता भवन्ति हेमन्ते मात्रा द्रव्यगुरू क्षयः। च.सू. 6/9

AGNIVESH

शीतल काल में ऋतु वायु के स्पर्श से व्यक्ति की जठराग्नि प्रबल हो जाती है तथा यह गुरू आहार के पाचन में भी सक्षम हो जाती है।– जठराग्नि वृद्धि के फलस्वरूप हेमन्त ऋतु में धातु क्षय जन्य वात वृद्धि होती है।

आहार – स्निग्ध, अम्ल, लवण रस, आनूप मांस।

– मधु का प्रयोग अनुपान के रूप में।

– **हेमन्तेऽभ्यस्यत स्तोय मुष्णं चायुर्न हीयते।** हेमन्त ऋतु में उष्णजल का सेवन करने से व्यक्ति की आयु का नाश नही होता।

विहार – अभ्यंग, उत्सादन,मूर्ध तैल, जेन्ताक स्वेद

– उष्ण गर्भग्रह में निवास

– उष्ण अगुरू का लेप

– **प्रकायं च निषेवेत मैथुनं शिशिरागमें।।**

वर्जन – वर्जयेदन्नपानानि वातलानि लर्घुन च। प्रवातं प्रमिताहारंमुदमंथ हिमागमे।। च.सू. 6/18

2 शिशिर ऋतु –

हेमन्त शिशिरो तुल्यौ शिशिरेऽल्पं विशेषणम्। रौक्ष्यंमादानजं शीतं मेघ मारूत वर्षजम्।। च.सू. 6/19

–शिशिर के लक्षण हेमन्त ऋतु के तुल्य ही होते हैं लेकिन आदान काल की रूक्षता मेघ, वायु,तथा पुष्टि के कारण शीतलता में वृद्धि हो जाती है। अतः उष्ण गृह में निवास करना चाहिए।

वर्जन – कटुतिक्त कषायाणि वाततानि लघुनि च। वर्जयेत् अन्नपानानि शिशिरे शीतलानि च।। च.सू. 6/21

3 बसन्त ऋतु – हेमन्त ऋतु में संचित श्लेष्मा बसन्त में वातावरण की उष्णता से पिघल कर जठराग्नि को बाधित कर विविध विकारों की उत्पत्ति करता है। अतः बसन्त ऋतु में वमनादि कर्म करने का निर्देश है।

वर्जन – गुर्वम्ल स्निग्ध मधुरं दिवास्वप्नं च वर्जयेत।

आहार–विहार – व्यायामोद्वर्तन धूमः कवलगृह अंजन। – चन्दन अगुरू का लेप।

4 ग्रीष्म ऋतु –

आहार – मधुर, शीत, द्रव, स्निग्ध, अन्नपान।

–मंथ का प्रयोग – जांगल मांस – घृत, दुग्ध , आदि के साथ षष्टिक शाली।

विहार – दिन में शीतल गृह में शयन तथा रात्री में चन्द्रमा की शीतल किरणों में।

– चन्दन का लेप – प्रवात का सेवन।

वर्जन – मद्यं मल्पं न वा पेय मथवा सुबहुदकम्। लवणाम्ल कट्रष्णानि व्यायामं चात्र वर्जयेत् ।। च.सू 6/29

5 वर्षा ऋतु – आदाने दुर्बलेदेहे पक्ता भवति दुर्बलः।

आदान काल में बल में कमी हो जाने से जठराग्नि दुर्बल हो जाती है तथा वातादि तीनों दोषों का प्रकोप हो जाता है। अतः वर्षा ऋतु को सर्व दोष प्रकोपक ऋतु कहते हैं। तथा सभी वस्तुओं का अम्ल विपाक हो जाता है।

तस्मात् साधारणः सर्वो विधिवर्षासु शस्यते। अतः वर्षा ऋतु में सर्व दोष नाशक विधियों का प्रयोग प्रशस्त होता है।

आहार विहार – सभी पान व भोज्य पदार्थों में मधु मिलाकर सेवन करना चाहिए।

–पुराण जांगल मांस सेवन हितकारी

– नदी जल को छोडकर शेष सभी जल ग्राह्य

–प्रघर्षो इर्तने स्नान गंध माल्यपरो भवेत्।

वर्जन – उदमंथ दिवास्वपनंवश्यायं नदीजलम्। व्यायामातपं चैव व्यवायं चात्र वर्जयेत्।। च.सू 6/35

AGNIVESH

6 शरद ऋतु –

आहार –विहार –पित्तशामक आहार विहार मधुर, लघु, शीत, तिक्त द्रव्यों का प्रयोग , तिक्त घृत का प्रयोग।

वर्जनः – आतपस्य च वर्जनम्। वसा तैल अवश्याय आनूप मांस वर्जित, क्षार, दधि, दिवास्वपन, प्राग्वात्

हंसोदक – शरद ऋतु का जल हंसोदक कहलाता है।

" दिवासूर्यांशु संतप्तं निशि चन्द्राशुं शीतलम्।।"

सुश्रुत ने हंसोदक का नहीं किया है । भा. प्र. ने अंशुदक के नाम से वर्णन किया है।

ओकसात्म्य – उपशेते यदौचित्यादोकः सात्म्यं तदुच्यते।।

जो आहार विहार सतत् सेवन करने से सात्म्य हो जाता है उसे ओकसात्म्य कहते हैं।

सात्म्य के भेद –4 ऋतु, ओक, देश, रोग।

7 न वेगान् धारणीय अध्याय

चरक, सुश्रुत व वाग्भट् के अनुसार अधारणीय वेगों की संख्या 13 हैं।

चरक अधारणीय वेगः अधोमार्ग : मूत्र, पुरीष , रेतस, अपान–4

मुख : छर्दि, उद्गार, जृम्भा, क्षुधा, पिपासा–5

नेत्र : वाष्प, निद्रा–2

नासिका : क्षवथु , निश्वास–2

वाग्भट्:– वेगान्नधारयेत् वात विड्मूत्र क्षववृट्क्षुधाम्। निद्रा कास श्रमश्वास जृम्भाश्रुछर्दि रेतसाम्।।

वाग्भट् ने उद्गार के स्थान पर कास माना है।

अधारणीय वेग	लक्षण	चिकित्सा
1 मूत्र	बस्तिमेहनशूल, मूत्रकृच्छ, शिरोरूजा, विनाभ, वंक्षण आनाह	स्वेदन, अवगाहन, अभ्यंग, अवपीडकघृत, त्रिविध बस्तिकर्म
2 पुरीष	पक्वाशय, शूल, शिरःशूल, वातवर्च, अप्रवृति, पिण्डिका उद्वेष्टन, आध्मान	स्वेदन, अभ्यंग, अवगाहन, वर्ति, बस्तिकर्म, प्रमाथी अन्न।
3 शुक्र	मेढ्र वृषण शूल, अंगमर्द, हृदिव्यथा, मूत्रविबंध	अभ्यंग, अवगाहन, मदिरा, चरणायुधा, निरूहबस्ति।
4 अपान	विष्मूत्र अवरोध, आध्मान, वेदना, क्लम	स्नेहन, स्वेदन, वर्ति, वातहर, बस्ति, वातानुलोमक, अन्न
5 छर्दि	कण्डु, कोठ, अरूचि, व्यंग, शोथ, पाण्डु, ज्वर, कुष्ठ, हल्लास, विसर्प	भुक्त्वा प्रछर्दनं धूम, लंघन, रक्तमोक्षण, रूक्षअन्नपान, व्यायाम, विरेचन।
6 क्षवथु	मन्यास्तम्भः शिरः शूल अर्दित, अर्द्धावभेदक इन्द्रिय दौर्बल्य	उर्ध्वजत्रुगत अभ्यंग, स्वेद, धूम, हितं वातहनं आद्यं घृत चौतर मस्तिकम्।
7 उद्गार	हिक्का, श्वास, अरूचि, कम्प,हृदयविबंध, उरःविविधं।	हिक्कातुल्य औषध
8 जृम्भा	विनामः आक्षेप, संकोच, सुप्ति, कम्प, वेपन	सर्व वातहनं औषधम्।
9 क्षुधा	कार्श्य, दौर्बल्य, वैवर्ण्य, अंगमर्द, अरूचि, भ्रम	स्निग्ध, उष्ण, लघु भोजन
10 पिपासा	कण्ठस्यशोष, बाधिर्य, श्रम, साद, हृदिव्यथा	शीतल, तर्पण पदार्थ
11 वाष्प	प्रतिश्याय ,अक्षिरोग , हृदयरोग ,अरूचि ,भ्रम	स्वप्न ,मद्य, प्रियकथा ।
12 निद्रा	जृम्भा, अंगमर्द , तन्द्रा , शिरोरोग ,अक्षिरोग ।	स्वप्नं संवाहनानि च ।
13 श्रम निश्वास	गुल्म, हृदयरोग , सम्मोह	विश्राम वातघ्नश्च क्रिया हिता।

AGNIVESH

धारणीय वेग – चरक ने धारणीय वेगों की संख्या 18 बताई है।
मानसिक – 9, वाचिक – 5, कायिक – 4

व्यायाम –

शरीर चेष्टा या चेष्टा स्थैयार्था बलवर्धनी । देहव्यायाम संड.ख्याता मात्रयां तां समाचरेत।। च.सू. 7/31

शरीर की जो चेष्टा मन की स्थिरता व बल को बढाने के लिए की जाती है उसे व्यायाम कहते हैं।

व्यायाम के लाभ – स्वेदागम श्वास वृद्धि, गात्रलघुता, **हृदय अवरोध (सम्यक व्यायाम के लक्षण)**

लाघवं कर्म सामर्थ्य स्थैर्य दुख सहिष्णुता। दोषक्षयो ऽग्निवृद्धिश्च व्यायामादुप जायते।। च.सू. 7/32

सुश्रुत – व्याधयो नोपसर्पन्ति सिंह क्षुद्र मृगाइव। वयोरूपगुणैर्हीनं मपि कुर्यात सुदर्शनम्।।सु.चि 24

अधिक व्यायाम से हानि–

श्रमकलमः क्षय स्तृष्णा रक्तपितं प्रतामकः।अति व्यायामतः कासो ज्वरश्छर्दिश्च जायते।। च.सू. 7/31

व्यायाम, हास्य, भाष्य, अध्व, ग्राम्यधर्म, प्रजागरण– 6 कर्मों का अधिक सेवन करने पर उसी प्रकार मृत्यु हो जाती है जिस प्रकार गजधारीसिंह गज को खींचने पर मर जाता है।

" गज सिंह इवाकर्षन् सहसा स विनश्यति।।"

चरक ने पादांशिक क्रम का वर्णन इस अध्याय में किया है और पादांशिक क्रम 7 दिन का बताया है।
वाग्भट् – 14 दिन

पादांशिक क्रम का लाभ – क्रमेणापचिता दोषाः क्रमेणोपचिता गुणाः।।

–समपित्तऽनिलकफा केचिद् गर्भादि मानवाः। वातलाद्याः सदातुराः। च.सू. 7/40

वातिकाद्याः सदातुराः।। काश्यप

स्वास्थयवर्धक विधीः

विपरीत गुणस्तेषां स्वस्थवृते विधिर्हितः।।

मलायन – चरक ने मलायन की संख्या 10 बताई है। द्वे अधः सप्त शिरसि खानि स्वेदमुखानि च।।

दोषनिर्हरण काल–माधवे प्रथमे मासि नभस्य प्रथमे पुनः।सहस्य प्रथमे चैव हारयेद् दोष संचयम्।। च.सू. 7/46

दोष	निर्हरण काल	
V	श्रावण	S
P	टगहन	A
K	चैत्र	Ch

आप्तोप्देश लाभः

आप्तोपदेश प्रज्ञानं प्रतिपतिश्च कारणम्। विकाराणा मनुत्पत्तावुत्पन्नानां च शान्तये।। च.सू. 7/55

दहिसेवन के नियमः –

न नक्तं दधि भुंजित न चाप्य घृत शर्करम। नामुद्ग युषं नाक्षौद्रं नोष्णं नामलकैर्विना।। च.सू. 7/61

दहि का प्रयोग रात्री में नहीं करना चाहिए। तथा घृत, शर्करा, मुद्ग, यूष, मधु, आमलक मिलाए बिना तथा उष्ण करके नहीं करना चाहिए।

नियम विरूद्ध दहि सेवन करने से निम्न रोगों की उत्पत्ति होती है – ज्वर, रक्तपित्त, वीसर्प, कुष्ठ, पाण्डु, भ्रम व कामला ।

8 इन्द्रियोपक्रमणीय अध्याय

इन्द्रिय पंच पंचक– पंच इन्द्रिय, पंच इन्द्रिय द्रव्य, पंच इन्द्रिय अधिष्ठान, पंच इन्द्रिय अर्थ, पंच इन्द्रिय बुद्धि।

मनः– अति इन्द्रियं पुनर्मनः। सत्वसंज्ञक चेत इत्या हुरेके।
चेष्टां प्रत्यय भूतं मिन्द्रियाणाम्।
मनः पुरः सराणीन्द्रियाण्यर्थ ग्रहण समर्थानि भवन्ति। मन जिस प्रकार इन्द्रियार्थ ज्ञान के लिए प्रवृत होती है।

पंचज्ञानेन्द्रियां	इन्द्रिय द्रव्य	इन्द्रिय अधिष्ठान	इन्द्रियार्थ	इन्द्रिय बुद्धि
1 चक्षु	ज्योति (तेज)	अक्षि	रूप	चक्षु बुद्धि
2 स्त्रोत	खं (आकाश)	कर्ण	शब्द	श्रोत्र बुद्धि
3 घ्राण	भू (पृथ्वी)	नसिका	गंध	घ्राण बुद्धि
4 रसन	आप् (जल)	जिव्हा	रस	रसन बुद्धि
5 स्पर्शन	वायु	त्वक्	स्पर्श	स्पर्श बुद्धि

चरक के अनुसार बुद्धि के भेद **5** – इन्द्रिय बुद्धि, **2** – क्षणिका व निश्चियात्मिका, **असंख्य**
आध्यात्म द्रव्य गुण संग्रह : मन मनोऽर्थ बुद्धिरात्मा चेत्यध्यात्म द्रव्य गुण संग्रहः। शुभाशुभप्रवृतिनिवृति हेतु।।
– चरक न्याय व वेदान्त दर्शन के अनुसार इन्द्रियॉ पांचभोतिक होती है।
सांख्य व सुश्रुत के अनुसार इन्द्रियां अंहकारिक होती है।
मनसस्तु चिन्त्यमर्थः मन का विषय चिन्त्य है।
तत्र मनसो मनो बुद्धिश्च त एक समानातिहीनमिथ्या योगा प्रकृति विकृति हेतवो भवन्ति।। च.सू. 8/16
सदवृत का वर्णन चरक ने इस अध्याय में किया है। सदवृत का पालन करने से **अर्थ द्वय** की प्राप्ती होती है। – **आरोग्य, इन्द्रिय जय।**
चरक ने स्नान के 2 काल बताये हैं। प्रातः व सांय।
चरक ने पक्ष के तीन बार केश, श्मश्रु, लोम, नखकर्तन का निर्देश दिया है।
चरक ने इन्द्रिय पंचपंचक व हेतु चतुष्ट्य का वर्णन इन्द्रियोपकृमणीय अध्याय में किया है।

9 खुडड्ाक चतुष्पाद अध्यायः

चिकित्सा के चार पाद :–
भिषक द्रव्यानुपस्थाता रोगी पाद चतुष्ट्यम्।गुणवत् कारणं ज्ञेयं विकारा व्युपशान्तये।। च.सू. 9/3
चरक ने चिकित्सा के चतुष्पाद में भिषक (चिकित्सक) को प्रथम तथा रोगी को अन्तिम स्थान पर रखा हैं।
सुश्रुत : –
वैघोव्याध्युप सृष्टश्च भेषजं परिचारकः। एते पादाश्चिकित्सायाः कर्म साधन हेतवः।। सु. सू. 34/15
सुश्रुत ने चिकित्सा के चतुष्पाद में चिकित्सक को प्रथम तथा परिचारक को अन्तिम स्थान पर रखा है।
विकारौ धातु वैषम्यं साम्यं प्रकृतिरूच्यते। सुखसंज्ञकमारोग्यं विकारो दुखमेव च।। च.सू. 9/4
रोगस्तु दौष वैषम्य – दोष साम्यं आरोग्यता – वाग्भट्।।
चिकित्सा – प्रथम परिभाषा
चतुर्णां भिषगादीनां शस्तानां धातु वैकृते। प्रवृतिर्धातु साम्यार्था चिकित्सेत्यभिधीयते।। च.सू. 9/5
धातुओं के विकृत हो जाने पर चिकित्सा के चतुष्पादों के द्वारा धातुओं को साम्य करने हेतु जो क्रिया की जाती है उसे चिकित्सा कहते है।
चिकित्सा के गुण –
1 **श्रुते पर्यवदातत्वं** – शास्त्र का सर्व ज्ञान।
2 **दृष्टकर्मता** – प्रत्यक्ष दृष्टा।
3 दाक्ष्य – दक्षता।

4 **शौच** – पवित्रता।

द्रव्य के गुण –

1 **बहुता** – पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होना।

2 **योग्यत्व** – रोगनाशक शक्ति।

3 अनेक विधकल्पना – अनेक प्रकार से निर्माण।

4 सम्पत् – सभी गुणों का होना।

परिचारक के गुण –

1 **उपचारज्ञता** – चिकित्सा का ज्ञान होना।

2 **दाक्ष्य** – दक्षता।

3 **अनुरागश्च भर्तरि** – रोगी के प्रति प्रेम।

4 **शौच** – पवित्रता।

रोगी के गुण –

1 स्मृति – स्मरण शक्ति वाला।

2 निर्देशकारित्व – निर्देशों का पालन करने वाला।

3 अभीरू – डरने नहीं वाला।

4 ज्ञापकत्व – रोग के बारे में जानने वाला।

कारणं षोडशगुणं सिद्धौ पाद चतुष्ट्यम्। विज्ञाता शासिता योक्ता प्रधानं भिषगत्र तु।। च.सू. 9

– चिकित्सक चतुष्पाद में ज्ञाता और शासक होने के कारण श्रेष्ठ होता है।

प्राणाभिसर वैद्य – 4 गुण

तस्मात् शास्त्रेऽर्थविज्ञाने प्रवृतौ कर्म दर्शने। भिषक् चतुष्टये युक्तः प्राणाभिसर उच्चते।।

शास्त्र अध्ययन, शास्त्र ज्ञान, प्रत्यक्ष कर्म, प्रत्यक्ष दर्शन।

राजवैद्य – 4 गुण

हेतु लिंग प्रशमने रोगाणामपुनर्भवे।

जिस वैद्य को रोग के हेतु, लक्षण, शमन के उपाय तथा पुनः उत्पत्ति ना होने के कारण का ज्ञान हो ।

शस्त्र शास्त्राणि सलिलं गुण दोष प्रवृतये। पात्रा पेक्षिण्यतः प्रज्ञां चिकित्सार्थ विशोधयेत।। च.सू. 9/20

शस्त्र, शास्त्र,व सलिल तीनों गुण व दोष की प्रवृति के लिए पात्र की अपेक्षा करते हैं।

उत्तम चिकित्सा के गुण –(V3ST क्रिया)

विद्या, वितर्क, विज्ञानं, स्मृति, तत्परता क्रिया।

शास्त्र, ज्योतिः प्रकाशार्थ दर्शनं बुद्धि रात्मनः। ताभ्यां भिषक् सुयुक्ताभ्यां चिकित्सन् नापराध्यति।। च.सू. 9/24

शास्त्र ज्योति स्वरूप है। तथा बुद्धि दृष्टि स्वरूप है इसलिए शास्त्र व बुद्धि से युक्त वैद्य चिकित्सा में अपराध नहीं कर सकता है।

वैद्य वृतियां – मैत्री कारूण्यमार्तेषु शक्ये प्रीतिरूपेक्षणम्। प्रकृतिस्थेषु भूतेषु वैधवृतिश्चतुर्विधा।। च.सू. 9/26

आचार्य चरक ने वैद्य की **4 वृतियां या ब्राह्मी बुद्धि** मानी है।

1 मैत्री 2 आर्तेषु कारूण्य (रोगी के प्रति कारूण्य) 3 शक्येप्रीती (साध्य रोग से स्नेह) 4 उपेक्षणम् प्रकृति स्थेषुः (असाध्य रोग की उपेक्षा)

10 महाचतुष्पाद अध्याय

ातुष्पाद षोऽशकलं भेषजंमिति भिषजोभाषन्ते।

चिकित्सा के चार पाद व सोलह कलाओं से युक्त होती है।

मैत्रेय की शंकाः– कुशल चिकित्सक, उपकरण , परिचारक तथा रोगी के आत्मवान होते हुए भी कुछ रोगी लाभान्वित होते हैं।जबकि कुछ की मृत्यु हो जाती है ऐसा क्यों होता है?

आत्रेय का समाधान – चतुष्पाद गुण सम्पन्न होते हुए भी कुछ रोगी मृत्यु को प्राप्त होते है क्योंकि असाध्य रोगों की चिकित्सा नहीं होती।

अतः कुशल चिकित्सक वो ही होता हे जो रोगी की परिक्षा करने के पश्चात ही चिकित्सा प्रारम्भ करता है।

(''परीक्ष्य कारिणो हि कुशला भवन्ति'')

असाध्य रोगों की चिकित्सा करने से सदैव 5 भावों का ह्रास होता है।

'' **अर्थ विद्या यशो हानिमुपक्रोशसंग्रह।।''**

अर्थ, विद्या, यशहानि, उपक्रोश (समाज में निंदा) व असंग्रह (रोगियों का संग्रह नहीं होता।)

साध्य व असाध्य रागों के भेद :

सुखसाध्यंमत साध्यं कृच्छ साध्य मथापि च। द्विविधं चाव्य साध्यं स्थाद् याप्यं यच्चानुक्रम।।

साध्यानां त्रिविधश्चाल्प मध्यमोत्कृष्टतां प्रति। विकल्पो न त्वासाध्यानां नियतानां विकल्पनां।। च.सू. 10/10

साध्य रोग : – 2 भेद – सुखसाध्य, कृच्छसाध्य

असाध्य रोग :– 2 भेद – याप्य , अनुपक्रम

पुनः साध्य रोग – 3 भेद – अल्पउपाय साध्य, मध्य उत्कृष्ट उपाय साध्य।

निश्चित रूप से असाध्य (अनुपक्रम)– व्याधियों का कोई विकल्प नहीं होता हैं।

1 सुख साध्य रोगों के लक्षण –

– हेतु पूर्वरूपाणि रूपाण्यल्पानि यस्यच।
– न च तुल्य गुणो दूष्यो न दोष प्रकृतिर्भवेत।
– न च काल गुणस्तुल्यो न देशो दुरूपक्रमः।
– गतिरेका नवत्वं च।
–रोगस्योपद्रवा न च।
– दौषैश्चैकः समुत्पतौ।
– देह सर्वोषध क्षमः।
: चतुष्पादोपपतिश्च सुखसाध्य लक्षणम्।

2 कृच्छसाध्य रोगों के लक्षण –

– निर्मित्त पूर्वरूपाणां रूपाणां मध्यमे बले।
– काल प्रकृति दूष्याणां सामान्येऽन्यतमस्य च।
– गर्भिणी वृद्ध बालानां नात्युपद्रवपीडितम्।
– शस्त्रक्षाराग्नि कृत्यनामनवं कृच्छदेशजम्।
– विद्यादेकपथं रोगं नातिपूर्ण चतुष्पदम्।
– द्विपथं नाति कालं वा, द्विदोषजम्।

3 याप्य रोगों के लक्षण –

– शेषत्वादायुषो याप्यं साध्यं पथ्यसेवया।
– लब्धाल्प सुरवं मल्पेन हेतुनांऽऽशुप्रवर्तकम्।
– गंभीर बहुधातुस्थं

AGNIVESH

– मर्म संधि समाश्रितम्।
– नित्यानुशायिनं रोगं दीर्धकालवस्थितम्।

4 प्रत्याख्येय रोगों के लक्षण

– त्रिदोषजम् ।
– क्रियापथंमति क्रान्तं।
– सर्वमार्गानुसारिणं।
– औत्सुक्यारति, सम्मोहकर इन्द्रिय नाशनम्।
– दुर्बलस्य सुसंवृद्धं व्याधि सारिष्टमेव च।

जो वैद्य साध्य असाध्य के भेद को जानता है वह मत्रेय के समान मिथ्या बुद्धि नहीं रखता।

AGNIVESH